P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-II*October-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

राजनीति का अपराधीकरण एवं पुलिस सुधार

निखिल कुमार श्रीवास्तव
प्रवक्ता,
समाजशास्त्र विभाग,
दयानन्द बछरावाँ पी0जी0 कालेज,
बछरावाँ,रायबरेली

सारांश

स्वतंत्रता प्राप्ति से भी पहले से अपना वीभत्स रूप दिखा रहे भ्रष्टाचार खास तौर से 1935 के कानून के तहत राज्यों में बनी लोकप्रिय सरकारों के अस्तित्व में आने के बाद पनपे भ्रष्टाचार के तुलना में राजनीति का अपराधीकरण और (अपराधियों और राजनीतिज्ञों के बीच साठ–गॉठ) एक नई अवधारणा है। इसकी शुरुआत राजनीतिज्ञों द्वारा चुनाव में अपराधियों की मदद लेने से हुई थी। मोटे तौर पर चुनाव के अपराधीकरण का अर्थ निम्न प्रकार है।

1. राजनीतिज्ञों द्वारा 'पैसा' और 'बाहुबल' का प्रयोग, खास तौर से चुनावों के दौरान,
2. सत्ता में रहने वाले राजनीतिज्ञों द्वारा अपराध में सहायता और बढ़ावा देना तथा अपराधियों को शरण देना, इसके लिए आवश्यकता पड़ने पर कानून लागू करने वाली एजेन्सियों की कार्यवाही में भी दखल दी जाती है।
3. प्रशासन का राजनीतिकरण, खास तौर से पुलिस विभाग का, इसकी वजह से प्रभावशाली राजनीतिज्ञों को दखलंदाजी करने दी जाती है और कई बार तो उन्हें विशेष सुविधाएँ भी मुहैय्या करायी जाती हैं,
4. हत्या, लूटपाट, अपहरण जैसे जघन्य अपराधों में लिप्त व्यक्तियो को राज्यसभा और लोकसभा में चयन तथा
5. सरकार में अपराधियों को प्रतिष्ठित पद या सम्मान मिलना, जैसे मंत्री बनना।

मुख्य शब्द : राजनीतिक अपराधीकरण, पुलिस व्यवस्था, कानून व्यवस्था, अपराधी।

प्रस्तावना

आज हम न सिर्फ राजनीति के अपराधीकरण का सामना कर रहे हैं बल्कि उससे भी घृणित–अपराधियो के राजनीतिकरण का भी मुकाबला कर रहे हैं। एक समय ऐसा आया जब अपराधियों को एहसास हुआ कि राजनीतिज्ञों की मदद करने के बजाय वे स्वयं ही विधानसभा या संसद में क्यों न प्रवेश करें और मन्त्री पद हासिल करें ताकि भविष्य मे उनकी अपराधिक गतिविधियों के लिए इसका इस्तेमाल भी हो सके।

राजनीति के अपराधीकरण का पहला शिकार प्रशासन और पुलिस बने, इसके परिणामस्वरूप कानून की एक व्यवस्था तैयार हुई जो न तो ईमानदार है और न निष्पक्ष। पुलिस सेवा की नैतिकताएँ ताख पर रख दी जाती हैं और इसकी वजह से सुव्यवस्थित अपराध के विकास को प्रोत्साहन मिलता है, खास तौर से मुम्बई और दिल्ली जैसे शहरी क्षेत्रों में। अब परम्परागत अपराध जैसे चोरी, उठाईगीरी, सेंधमारी, छीना–झपटी और डकैती के दिन लद गये हैं। जबकि पहले इन्हीं अपराधों का मुकाबला करना होता था। आज 'संगठित अपराध' पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है इनमें जबरन वसूली, फिरौती के अपहरण, शहरी सम्पत्ति को जबरन हथियाना और बेचना, मादक द्रव्यों का व्यापार, हथियारों की तस्करी और जघन्य हत्यायें।

उद्देश्य

1. भारतीय पुलिस व्यवस्था की कार्यप्रणाली का विश्लेषण।
2. सामाजिक व्यवस्था में कानून के प्रभाव का विश्लेषण।
3. राजनीतिक अपराधीकरण का समाज पर प्रभाव का विश्लेषण।
4. राजनीतिक अपराधीकरण रोकने हेतु संवैधानिक प्रावधानों का विश्लेषण।
5. समाज में पुलिस की छवि का विश्लेषण।

इण्टरपोल ने मई 1988 में व्यवस्थित अपराध पर अपने पहले अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में व्यवस्थित अपराध को बहुमत से इस प्रकार परिभाषित कया था– निरन्तर गैर कानूनी गतिविधियों पर लगा कोई, किसी उद्यम या लोगों का समूह, जिसका प्रमुख उद्देश्य राष्ट्रों की सीमाओं की फिक्र किये बिना अपना लाभ कमाना है। आजकल हमारे सार्वजनिक जीवन में गन्दगी फैला रहे हैं ऐसे

व्यवस्थित अपराधियों को दल राष्ट्रीय समुदाय के लिए भी चिन्ता का विषय बन चुके हैं क्योंकि वे इतना अधिक मुनाफा कमा रहे हैं कि इससे कई देशों की अर्थव्यवस्था ठप्प हो सकती है। चूँकि वे अपने काम के लिए हिंसा, धमकी और भ्रष्टाचार के लिए भी तैयार रहते हैं इसलिए भी यह गहरी चिन्ता का विषय होना चाहिए।

उदाहरण के लिए मुम्बई की चर्चा करते हुए, भारत सरकार के पूर्व कैबिनेट सचिव बी0जी0 देशमुख ने लिखा है

यदि गैंगों द्वारा किये जा रहे हत्याओं को रोकने के लिए शीघ्र सख्त कदम नहीं उठाये गये तो आशंका है कि मुम्बई 30 के दशक में शिकागो जैसा बन जायेगा। उस समय इस अमेरिकी शहर पर माफिया गिरोह राज करते थे। हममे से कई लोग तो हमेशा यही सोचते रहे हैं कि मुम्बई सबसे सुरक्षित शहर है। यहाँ की पुलिस की गौरवपूर्ण परम्परा और प्रतिष्ठा रही है। फिर इसे क्या हो गया कि यहॉ माफिया गैंग सरेआम लोगों की हत्या कर रहे हैं। इसके कई कारण हैं मगर इनमें सबसे महत्वपूर्ण है राजनीति का अपराधीकरण। इसकी शुरुआत 70 के दशक के आखिर मे हुई। राजनीतिक दलों ने कई तरह के कामों खासकर चुनाव लड़ने के लिए अपराधियों की मदद लेनी शुरू की। इसके परिणामस्वरूप, स्वाभाविक तौर पर अपराधीकरण हुआ और अपराधिक रिकार्ड वालों को पार्टियों के टिकट दिए गये।

पुलिस को भी पक्के तौर पर पता नहीं था कि अपराधियों के प्रति सख्त कार्यवाही करने पर उन्हें राजनीतिक आकाओं की क्या प्रतिक्रिया होगी। इन तत्वों ने पुलिस फोर्स में भी कई लोगों को भ्रष्ट बना दिया है। मै यह कहना चाह रहा हूँ कि राजनीति के अपराधीकरण और पुलिस बल के राजनीतिकरण ने 'बुराइयों' को समाप्त करने का काम अधिक कठिन बना दिया है। (दि हिन्दू, 4 सितम्बर 97)।

अपराधियों और राजनीतिज्ञों के बीच बढ़ती साठ–गॉठ अब शहरी सीमाओं तक ही नहीं रह गयी है। इसका विस्तार काफी हद तक ग्रामीण क्षेत्रों में भी हो चुका है, खास तौर से बिहार और उत्तर प्रदेश में।

ग्रेजुएट स्कूल आफ इंटरनेशनल स्टडीज, युनिवर्सिटी आफ डेनवर के प्रो0 डेविड, एच, बायले ने काफी समय तक भारत में पुलिस की कार्यविधि का सघन अध्ययन किया है। 6–8 नवम्बर 1981 को मैडीसन में दक्षिणपूर्वी एशिया पर दसवें वार्षिक सम्मेलन में प्रस्तुत अपने आलेख 'दि पुलिस एण्ड पॉलिटिकल आर्डर इन इण्डिया' में लिखा था।

भारतीय पुलिस के लिए पिछला दशक अभूतपूर्व तनाव का था। संक्षेप में, वे पक्षपातपूर्ण राजनीति में शामिल होने लगे हैं। यह उनके दिमाग में बैठा हुआ है, उनमें काफी गहरा विद्वमान है और वे इसमें शामिल होने के लिए एकजुट होकर व्यवस्थित हो गये हैं। मेरे ख्याल से उनके राजनीतिकरण ने कानून के राज को काफी नुकसान पहुॅचाया है। पुलिस अफसर यह महसूस करने लगे हैं कि भारत में न्याय की दोहरी प्रणाली का विकास होने लगा है– एक तो अपराधिक न्याय प्रक्रिया के औपचारिक माध्यमों से और दूसरा राजनीतिक माध्यमों से।

भारत पुलिस सेवा के अफसरों के 'बायले' 'भारत के कमजोर लोहे के ढॉचे की एक छड़' कहते हैं। उन्होंने पाया कि इन अफसरों में किंकर्तव्यविमूढ़ होने जैसी स्थिति है और उनमें उत्साह की भी कमी है। उन्होंने सम्मेलन में प्रतिनिधियो को बताया कि समूचे भारत में पुलिस सेवा के अफसरो ने पिछले बीस वर्षों के दौरान राजनीति के भ्रष्ट करने वाले प्रभाव और गौर में कमी की खुलकर चर्चा की। उन्होंने यह भी बताया कि:– 'इसके सदस्य अब नहीं मानते कि वे भारत को सामाजिक, आर्थिक या सबसे जरूरी नैतिक रूप से आगे बढ़ाने वाली शक्ति रह गये हैं, उनकी राष्ट्रसेवा की भावना लड़खड़ा गयी है और वे खतरनाक रूप से एक ऐसी व्यवस्था में जीने की आदत डाल चुके हैं जिसका स्वरूप तय करना उनके बस के बाहर है।

इसके बाद के पन्द्रह वर्षों में स्थिति और खराब हुई है। अपराधियों राजनीतिज्ञों के बीच पनपते सम्बन्धों की इस चिन्ताजनक स्थिति की ओर भारत सरकार का ध्यान काफी देर से गया और 1992 मे 'भारत में अपराधिक न्याय का प्रशासन' विषय पर मुख्यमंत्रियों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें सर्वसम्मति से पास किये गये एक प्रस्ताव में राजनीति के बढ़ते अपराधीकरण और अपराधियों के राजनीतिकरण पर चिन्ता जाहिर की गयी। सम्मेलन ने बाद की कार्यवाही के लिए केन्द्रीय गृहमन्त्री की अध्यक्षता में मंत्रियों के एक दल के गठन की सिफारिशें की। इस दल की शायद ही कभी बैठक हुई और मुख्यमन्त्रियों के सम्मेलन की सफारिशें सभी व्यवहारिक उद्देश्यों से बेमतलब हो गयी। भारत सरकार के अधीनस्थ 'ब्यूरो आफ पुलिस रिसर्च एण्ड डेवलपमेण्ट' नामक पुलिस शोध संस्था द्वारा प्रेरित किये जाने के बावजूद कोई बात नहीं बन पायी।

दूसरे वर्ष 9 जुलाई 1993 को सरकार ने गृहमंत्रालय में एक समिति का गठन किया। केन्द्रीय गृह सचिव एन0एन0 बोहरा इसके अध्यक्ष, रॉ के निदेशक, आई0बी0 के निदेशक, विशेष सचिव (गृह), आदि सदस्य थे और संयुक्त सचिव (पुलिस) सदस्य सचिव थे। समिति को उन अपराध तंत्रों/ माफिया संगठनों की गतिविधियों से सम्बन्धित सभी सूचनाओं का जायजा लेने को कहा गया जिनके सरकार के सदस्यों और राजनीतिक व्यक्तियों से सम्बन्ध थे और वे उनकी रक्षा करते थे, फिर इसे अपनी सिफारिश पेश करनी थी। तत्पश्चात समिति ने 3 अक्टूबर 93 को रिपोर्ट दी।

1. समूचे भारत में अपराध तन्त्र स्वयं एक कानून बन गये थे। छोटे शहरों और ग्रामीण इलाकों में गुण्डे मनमानी कर रहे थे और सरेआम हत्याऍ हो रही थीं। देश के अधिकांश हिस्सों में अपराधिक गैंग, पुलिस, नौकरशाह और राजनीतिज्ञों की साठ–गॉठ एक आम बात हो गयी थी।
2. अपराधिक गिरोह, सशस्त्र रणवीर सेना जैसे सेनाओं, ड्रग माफिया, तस्करों, मादक द्रव्यों के व्यापारियों और आर्थिक लाबियों की संख्या देश भर में तेजी से बढ़ती

जा रही थी। इन्होंने पिछले वर्षों में नौकरशाहों/सरकारी तंत्रों स्थानीय स्तर पर नेताओं, मीडिया के लोगों और चुनिन्दा जगहों पर गैर सरकारी क्षेत्रों में आसीन लोगों का एक सघन नेटवर्क तैयार कर लिया था। इनमें से कुछ लोगों के तो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध भी थे जिनमें विदेशी गुप्तचर एजेन्सियों से सम्बन्ध भी शामिल थे।

3. उत्तर प्रदेश, बिहार और हरियाणा जैसे राज्यों में गिरोहों के स्थानीय नेताओं का संरक्षण और सरकारी तन्त्र से सुरक्षा प्राप्त थी। कुछ राजनीतिज्ञ इन गिरोहों के नेता बनकर राज्य विधान सभा और संसद का चुनाव जीत गये थे।
4. माफिया तंत्र दरअसल एक समानान्तर सरकार चला रहा था और इस कारण सरकारी तंत्र अब अपना महत्व खो रहे थे।
5. इन संगठनों ने काफी पैसा, बाहुबल और सामाजिक प्रतिष्ठा हासिल कर ली है तथा इतने प्रभावशाली बन गये हैं कि जांच व न्याय देने वाली एजेन्सियों का कार्य काफी कठिन हो गया है। यहॉ तक कि न्यायपालिका के सदस्य भी माफिया के प्रभाव से अछूते नहीं रह गये थें ।
6. किसी मामले की जॉच करने वाली अधिकारी का तबादला अक्सर काम पूरे करने के पहले ही हो जाता है आदि।

सच तो यह है कि समिति से ज्यादा खुद एन0एन0 वोहरा ज्यादा चर्चित हो गये थे दुर्भाग्यवश जब स्थिति से निबटने के तरीकों की बात आयी तो वोहरा एक कारगर एजेसी बनाने की बजाय पुलिस संस्थाओं के अन्य कुशल आलाकमानों पर गृह सचिव के सर्वोपरि होने की व्यवस्था के बारे में अधिक चिन्तित थे। पैरा 15.1 में वोहरा ने लिखा– ''सामान्य तौर पर इस रिपोर्ट की रूपरेखा सदस्य– सचिव (जो वोहरा के अधीनस्थ गृह मन्त्रालय, संयुक्त सचिव थे) द्वारा तैयार किया जाना चाहिए था और समिति द्वारा अन्तिम रूप दिया जाना था, परन्तु इस मामले में प्रवृत्ति के मद्देनजर मैंने इस समिति के सदस्यों के विचार जानने के अलावा उन पर और अधिक कार्य की जिम्मेदारी सौंपना उचित नहीं समझा इसलिए मैंने तय किया कि यह रिपोर्ट खुद लिखवाऊॅगा।

संवेदनशील संगठनों के शीर्षस्थ अधिकारियों वाली ऐसी अतिशक्तिशाली समिति द्वारा रिपोर्ट तैयार किये जाने के मामले में यह दृष्टिकोण विचित्र लगता है। समिति के सदस्यों ने एक ऐसी मध्यस्थ एजेन्सी की स्थापना के विचार व्यक्त किये थे, जिसकी मुख्य जिम्मेदारी सभी सूचनाऍ एकत्र करना, उनका मिलान और इन सभी सूचनाओं के अनुसार काम करना था न कि व्यवस्था लागू करने के लिए उचित तंत्र का निर्माण करना था। समिति ने स्थिति से निपटने के लिए आवश्यक कदमों की रूपरेखा तैयार करने की कोशिश नहीं की। अन्य सदस्यों के विचारों को ताख पर रखते हुए वोहरा ने सिफारिश की ''तार्किक यही होगा कि मध्यस्थ तंत्र गृहमंत्रालय के अधीन हो, गृह सचिव स्वयं इसका निरीक्षण करें, मंत्रालय के एक या कई अफसर उनकी सहायता कर सकते हैं। रिपोर्ट में 'राष्ट्रीय पुलिस आयोग' और 'शाह आयोग' की रिपोर्ट के बाद मोरारजी देसाई सरकार द्वारा नियुक्ति एल0पी0 सिंह समिति की सिफारिशों की कोई चर्चा भी नहीं की गयी थी। इसमें पुलिस और केन्द्रीय पुलिस एजेन्सियों को राजनीतिक दखलंदाजी से अछूता रखने और शीर्षस्थ पुलिस अफसरों को अधिक कुशल व दक्ष तरीकों से अपने कर्तव्य का निर्वाह करने योग्य बनाने के लिए किसी भी तरह से परेशान किये जाने से सुरक्षित करने आदि की भी कोई चर्चा नहीं थी।

भारतीय प्रशासनिक सेवा के सेवा निवृत्त सदस्य और एक कर्मठ अफसर माधव गोंडबोले ने अपनी पुस्तक 'अनफिनिस्ड एनिंग्स'' में वोहरा रिपोर्टों को बेमानी बताया है कि इसमें शायद ही कुछ नया है। उन्होंने काफी हताश होकर केन्द्रीय गृह सचिव के पद से इस्तीफा दे दिया था। असल में उन्होंने जो लिखा वो इस प्रकार है, ''विशेष बात यह है कि जो महत्वपूर्ण है वह इसमें (रिपोर्ट में) नही है। जटिल मुद्दों की चर्चा ऐसे सरसरी तौर पर नहीं की जा सकती है।''

स्वाभाविक तौर पर, यह रिपोर्ट ठण्डे बस्ते में ही पड़ी रही। कुछ वर्षों बाद इस रिपोर्ट की प्रति संसद में पेश करने की मांग पर हंगामा खड़ा हुआ। लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष रविराय के अनुसार ''संदेहास्पद परिस्थितियों में यह रिपोर्ट संसद में पेश की गयी ताकि लोगों का ध्यान नयना साहनी हत्या काण्ड से हटाया जा सके। इसमें सत्ताधारी पार्टी का एक कार्यकर्ता शामिल था।'' लगता है कि वोहरा समिति को दी गयी शीर्षस्थ राजनेताओं और माफियाओं की साठ–गॉठ का पर्दाफाश करने वाली कुछ महत्वपूर्ण रिपोर्ट को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया गया है। इसका एक हिस्सा अब अनौपचारिक तौर पर दिल्ली में विविध लोगों के बीच चक्कर काट रहा है। इनमें कुछ चौकाने वाले तथ्य सामने आते हैं, उनमें से कुछ की चर्चा नीचे दी जा रही है।

1. इसमें मूलचन्द सम्मत राज शाह उर्फ मूल चन्द उर्फ चोकसी, निवासी 604, रजिन्दर बिहार, ग्विल्डर लेन, वालिंगटन रोड, मुम्बई की चर्चा की गयी। उसने 1980 में ही दाउद इब्राहिम से घनिष्ठ सम्बन्ध बना लिया था और वह बम्बई में कई महत्वपूर्ण लोगों से पैसा लेकर मध्यपूर्व और अन्य देशों में सुरक्षित रखने के लिए भेजता था। इसमें एक पूर्व मुख्य मंत्री के 20–50 करोड़ रूपये भी शामिल थे।
2. मार्च 1989 में मूलचन्द के खिलाफ कोफेपोसा में बंदी बनाने के आदेश जारी किये गये थे। मई 1990 में महाराष्ट्र के गृह विभाग के एक राजनीतिज्ञ ने इसे रद्द कर दिया था कथित रूप से दो करोड़ रूपये के एवज में।
3. मुम्बई पुलिस ने अप्रैल 1991 में मूलचन्द को गिरफ्तार कर लिया था। उसे मुम्बई में 17 अप्रैल 1991 को विशेष अदालत में पेश किया गया। वह 24 अप्रैल 1996 तक पुलिस हिरासत में रहा। सी0 बी0 आई0 की पूछतॉछ में मूलचन्द ने कथित रूप से यह दावा किया कि उसे अधिक समय तक हिरासत में

नहीं रखा जा सकता और इसी सन्दर्भ में उसने अपने ऊँचे राजनीतिक सम्बन्धों की चर्चा की।

4. मार्च 1993 में बम्बई में हुए बम काण्ड के बाद मूलचन्द फिर आतंकवादियों और अण्डरवर्ल्ड को वित्तीय सहायता देने के लिए संदेह में घेरे में आया। बम्बई सी0बी0आई0 की अपराध शाखा के डी0आई0जी0 ने 4 मई 1993 को उसे गिरफ्तार किया और आखिरकार उसे टाडा के तहत उसे न्यायिक हिरासत में रखा गया।
5. रिपोर्ट में इस बात की भी पुष्टि की गयी है कि मूलचन्द का राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों में खास दबदबा था। इसकी वजह से, और पैसे की उसकी ताकत के कारण राजस्व खुफिया निदेशालय, प्रवर्तन निदेशालय और सीमा शुल्क विभाग गिरफ्तारी के बाद उससे लम्बी पूछतॉछ नहीं कर सका।
6. ईस्ट–वेस्ट एयरलाइन्स भी ईस्ट–वेस्ट ट्रवेल एण्ड ट्रेड लिक्स लिमिटेड, बम्बई की सहायिका है। इसके चेयरमैन बहरीन में रहने वाले अनिवासी भारतीय हैं। दाउद इब्राहिम से इनके घनिष्ठ सम्बन्ध थे। खबर थी कि जनता दल के एक नेता ने ईस्ट–वेस्ट एयरलाइन्स के लिए उसी के एक निदेशक के जरिये वित्तीय व्यवस्था करने में बिचोलिये का काम किया था। आरोप है कि एक कैबिनेट सचिव ने देना बैंक, इलाहाबाद बैंक आदि से पैसा प्राप्त करने में मदद की थी।
7. समझा जाता है कि एक पूर्व प्रधानमंत्री के निजी सचिव रह चुके उनके एक नजदीकी व्यक्ति ने पैसे जुटाने में कथित रूप से ईस्ट–वेस्ट एयरलाइन्स की मदद की ओर यह पैसा प्रधानमंत्री के करीबी लोगों से जुटाया गया और इनमें खास तौर से एक ऐसे मंत्री भी शामिल थे जो रिपोर्ट तैयार होते समय यानी 1993 में केन्द्र सरकार में थे। यह भी पाया गया कि पूर्व प्रधानमंत्री के एक महत्वपूर्ण सलाहकार ने भी दाउद इब्राहिम और उसके गिरोह से ईस्ट–वेस्ट एयरलाइन्स के लिए धनराशि का इन्तेजाम करने के लिए बिचौलिए का काम किया था।
8. रिपोर्ट थी कि उस्मान गनी नामक एक व्यक्ति दुबई में विदेशी मुद्रा विनिमय का फलता–फूलता व्यापार चलाता था। उसने जिन लोगों के लिए यह काम किया उसमें चोटी की कई फिल्मी हस्तियॉ और मुम्बई के एक शीर्षस्थ राजनीतिज्ञ का एक नजदीकी वकील भी शमिल था। उस्मान गनी मुम्बई बम काण्ड के षडयंत्र में भी शामिल था।
9. दाउद इब्राहिम ने मुम्बई में सन एन सैण्ड होटल के करीब जमीन खरीदने के लिए दिल्ली के एक राजनैतिक कार्यकर्ता को 3 करोड़ रूपये दिये थे। यह कार्यकर्ता एक समय एक पूर्व प्रधानमंत्री के काफी करीब था।

देश जानना चाहता है कि बहुप्रचारित वोहरा समिति ने इस सनसनीखेज सूचनाओं का क्या किया और बाद में क्या ठोस कार्यवाही की गयी, और क्या इन सभी मामलों में आगे कोई और छानबीन की गयी। वोहरा समिति की रिपोर्ट की सिफारिशों के बावजूद जब कोई मध्यस्थ एजेन्सी की स्थापना नहीं की गयी तो उचित कार्यवाही की क्या उम्मीद की जा सकती है।

समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। अगर समाज में संगठित अपराध इसी तरह बढ़ता रहेगा तो जन सामान्य कैसे सुरक्षित रहेगा। जनता की सुरक्षा राज्य का दायित्व है। इस दायित्व को निभाने के लिए पुलिस संगठन का निर्माण किया गया है। पुलिस निष्पक्ष होकर काम कर सके, ऐसा वातावरण राज्यों को बनाना होगा। यह बहुत सोचनीय है कि आज सड़क के संसद तक अपराध का बोलबाला है।

इलाहाबाद जनपद में पुलिस कान्सटेबुलों पर आधारित समाजशास्त्रीय अध्ययन (अपराध के नये आयाम एवं पुलिस की समस्याऍ) के दौरान यह तथ्य सामने आया कि समाज में बढ़ते अपराध के कारण तमाम हैं– जैसे पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, बेकारी, बेरोजगारी, अशिक्षा, गरीबी, प्रलोभन, भोगवाद, उपभोक्तावादी संस्कृति, नैतिकता का ह्रास तथा मनुष्य में जरूरत से ज्यादा धन संचय करने की प्रवृत्ति। अपराध एक सामाजिक परिघटना है। समाज में अपराध को समाप्त करने के लिए इन सब कारणों को खत्म करने का उपाय करना होगा। बहरहाल समाज में बढ़े अपराध को खत्म करने के लिए, पुलिस को चुस्त–दुरुस्त करना अति आवश्यक है।

उत्तर प्रदेश के पूर्व डी0जी0पी0 श्री प्रकाश सिंह के द्वारा दायर की गयी जनहित याचिका पर सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने 22 सितम्बर 2006 को पुलिस विभाग में सुधार के लिए विस्तृत आदेश जारी किये थे। इसमें उसने राज्य स्तर पर एक स्टेट सिक्योरिटी कमीशन के गठन की बात कही थी। यह आयोग जिसमें कुछ गैर सरकारी प्रतिनिधि भी होंगे, सुनिश्चित करेगा कि राज्य पुलिस पर कोई अवांछनीय दबाव न पड़े। आयोग यह भी देखेगा कि पुलिस, कानून और संविधान के दायरे में रहकर काम करें। सर्वोच्च न्यायालय ने एक पुलिस स्टेब्लिशमेंट बोर्ड के गठन की बात भी कही थी, जो पुलिस अधिकारियों को प्रशासनिक मामलों में स्वायत्तता देगा। यह शिकायत प्राधिकरण बनाने की बात थी, जो पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध गंभीर शिकायतों की जॉच करेगा।

सर्वोच्च न्यायालय ने न केवल पुलिस महानिदेशक बल्कि फील्ड में तैनात पुलिस अधिकारियों के लिए भी दो वर्ष की न्यूनतम कार्य अवधि रखी थी। इसके अलावा पुलिस के जॉच सम्बन्धी और शान्ति व्यवस्था से सम्बन्धित स्टाफ को अलग करने का आदेश दिया था। मणिपुर के पूर्व डी0जी0पी0 वी0पी0 कपूर भी पुलिस सुधार की बात अपने लेख 'सुधारों में देरी दुष्परिणाम' में कर चुके हैं जो दैनिक जागरण में छपा था। इसी तरह पुलिस सुधार की चर्चा करते हुए सी0बी0आई0 के पूर्व उच्चाधिकारी निर्मल कुमार सिंह अपनी पुस्तक 'अपराध और भ्रष्टाचार की राजनीति' (वाणी प्रकाशन नई दिल्ली) में कर चुके हैं।

क्या कारण है कि एक नई राजनैतिक सत्ता बनने पर सारे विभाग में उलट–फेर हो जाते हैं। सत्ता में

आई पार्टी उन अधिकारियों को महत्वपूर्ण पदों पर तैनात करती है जो उनके प्रभाव में या उनके इशारे पर काम करें। इसी तरह देखा गया है कि किसी प्रदेश में चुनाव होंगे पर निर्वाचन आयोग द्वारा अधिसूचना जारी होने के पहले विभाग में व्यापक परिवर्तन किये जाते हैं। ऐसे थानाध्यक्षों को संवेदनशील जगहों पर तैनात किया जाता है, जहॉ वह सत्ताधारी पार्टी के पक्ष में अपना प्रभाव डाल सके। महानिदेशक के चयन में भी आम तौर पर मुख्यमंत्री ऐसे व्यक्ति को चुनते हैं जो पार्टी के हित में काम करे। इन सब बातों का पुलिस पर बहुत बुरा असर पड़ता है।

निष्कर्ष

आज यह किसी से छिपा नहीं है कि अधिकारियों का राजनीतिकरण हो गया है। कर्मचारियों में जातिगत भावनाऍ फैल गयी हैं जिससे अनुशासन लगभग टूट गया है। अपराधिक तत्वों को अनाप शनाप गनर देने से अनुशासन रसातल में चला गया है। जाहिर है कि ऐसे में पुलिस पर अपराधियों से साठगॉठ के आरोप गहराते चले जा रहे हैं आज पुलिस विभाग अन्दर से खोखला हो गया है।

पुलिस की छवि पर जो ऑच आयी है वह तो अपनी जगह है, जनता को इसका भारी खामियाजा भुगतना पड़ रहा है। अपराधों की जॉच पड़ताल सही ढंग से नहीं होती। स्थिति इतनी गंभीर हो गयी है कि पुलिस में सुधार अत्यन्त आवश्यक हो गया है। अगर और देर हुई तो आम जनता की जानमाल की सुरक्षा भगवान भरोसे ही रह जायेगी। पुलिस में सुधार के लिए पिछले 25 सालों में अनेकानेक आयोग गठित किये गये हैं। 1977 से 1981 के बीच राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने अपनी रिपोर्ट दी। 1998 में रिबेरो कमेटी बनी, सन् 2000 में पद्मनाभैया कमेटी ओर 2002 में मालीमथ कमेटी ने पुलिस में सुधारों के लिए माथापच्ची की। इन सभी आयोगों ने पुलिस को राजनीतिक प्रभाव से मुक्त करने की बात कही। इसके अलावा ''राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग'' ने भी अपनी वार्षिक रिपोर्टों में हर वर्ष पुलिस सुधार पर बल दिया। लॉ कमीशन की भी इस सम्बन्ध में संस्तुतियॉ हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारी राजनीतिक व्यवस्था इन आयोगों की संस्तुतियों को बराबर नजरअंदाज करती रही और अब जब सुप्रीम कोर्ट द्वारा इस सम्बन्ध में आदेश प्रसारित किये गये हैं तो हमारे सम्माननीय राजनेता कहते हैं कि यह राज्य के अधिकारों का हनन है।

सवाल यह है कि आजादी के बाद से पिछले लगभग 66 वर्षों में राजनेताओं ने पुलिस में सुधार और उसके आधुनिकीकरण के लिए क्या किया है? केवल संख्या बढ़ा देने से, मोटर गाड़ियॉ दे देने से या आधुनिक हथियार उपलब्ध करा देने से पुलिस आधुनिक नहीं हो जाती। आधुनिक बनने के लिए पुलिस की कार्यशैली में परिवर्तन होना चाहिए, पुलिस की जिम्मेदारी के एहसास में बदलाव होना चाहिए। आज यह जिम्मेदारी केवल सत्ताधारी पार्टी के प्रति है, जबकि वास्तव में जिम्मेदारी कानून के प्रति और संविधान के प्रति होनी चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने जो भी निर्देश दिये हैं वे पुलिस में आमूल–चूल परिवर्तन के उद्देश्य से है। उच्चतम न्यायालय ने एक ढांचा निर्धारित किया है, जो अगर खड़ा हो गया तो अन्य बहुत से दोष स्वतः ठीक हो जायेंगे। इसी क्रम में सोली सोराब जी कमेटी ने भी एक मॉडल पुलिस एक्ट बनाया है जो सब राज्यों को भेजा गया है। इस ड्राफ्ट पुलिस एक्ट में मानव अधिकारों पर विशेष बल दया गया है, बड़े शहरों में कमिश्नर पुलिस प्रणाली लागू करने को कहा गया है और रिपोर्टों के अनिवार्यतः लिखे जाने का प्रावधान है। उचित होगा यदि सभी सत्ता दल संकीर्णताओं से ऊपर उठते हुए तदनुसार अपने–अपने राज्यों के लिए पुलिस एक्ट बना लें। पुलिस में सुधार की आवश्यकता पर जितना भी कहा जाय कम होगा। इससे अपराध नियंत्रण और शान्ति व्यवस्था में प्रगति तो होगी ही, इसके अलावा आर्थिक क्षेत्र मे भी विकास का भी मार्ग प्रशस्त होगा।

सच तो यह है कि अगर पुलिस में सुधार न हुआ तो हमारा लोकतांत्रिक ढांचा भी एक दिन खतरे मे पड़ जायेगा। पूर्व डी0जी0पी0 प्रकाश सिंह कहते हैं कि माफिया सरगना और अपराधिक तत्व इस पर हाबी हो जायेंगे। पुलिस सुधार की आवश्यकता हर दृष्टिकोण से है– राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक प्रगति, सामाजिक सौहार्द्र और अपराध नियंत्रण के लिए। सवाल आज इस बात का नही है कि पुलिस में सुधार हो या न हो सवाल इस बात का है कि हमे कैसी पुलिस चाहिए– एक ऐसी पुलिस जो दंगे के समय मूकदर्शक बनी रहती है, रिपोर्ट लिखने में आनाकानी करती है, नेताओं के पीछे भागती है, अपराधिक तत्वों को संरक्षण देती है या ऐसी पुलिस जो जनता के प्रति संवेदनशील है, कानून को सर्वोपरि समझती है, संविधान की रक्षा करती है और कोई घटना होने पर दलगत व जातिगत भावनाओं से ऊपर उठकर अपराधिक तत्वों का दमन करती है जिससे हमारा समाज भय, भूख, भ्रष्टाचार रहित विकसित हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. 'बदलते हुए समाज में पुलिस की भूमिका' (शोध प्रबन्ध) डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद यादव, अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद।
2. 'अपराध के नए आयाम तथा पुलिस की समस्याएँ' वर्मा परिपूर्णानन्द, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1988।
3. अपराध और भ्रष्टाचार की राजनीति– निर्मल कुमार सिंह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2000।
4. सामाजिक व्यवस्था में पुलिस की भूमिका– प्रयोत सी0 एल0 विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
5. पुलिस किसकी जनता या शासक की– पूर्व डी0जी0पी0 प्रकाश सिंह (दैनिक जागरण 8–1–07)।